देखता हूँ दीप को

देखता हूं दीप को और खुद में झाँकता हूं
छूट जाता है पसीना और फिर कांपता हूं
एक तो जलते रहो और फिर अविचल रहो
क्या विकट संग्राम है कि युद्धरत प्रतिपल रहो
काश मैं भी दीप होता जूझता अंधियार से
धन्य कर देता धरा को ज्योति के उपहार से

Reproduced by www.hobbyshobby.com with author's permission